PUNE RESEARCH WORLD ISSN 2455-359X
AN INTERNATIONAL JOURNAL OF INTERDISCIPLINARY STUDIES VOL 5, ISSUE 3

स्वतंत्र एवं जोड राग : रसोत्त्तपत्ती भाव

अशोक सोपानराव बनसोड
सहा. प्राध्यापक
संगीत विभाग
एफ्. ई. एस.गर्ल्स कॉलेज, चंद्रपुर
महाराष्ट्र भारत.

प्रस्तावणा:—

संगीत का प्रधान हेतु मनोरंजन माना जाता है। रागों के माध्यम से श्रोताजनों का संगीत मनोविलास करना ही शास्त्रीय संगीत का मुख्य उद्देश मात्र है। मानवीय भाव भावनाओं कें विविध छटाएँ रसोंभावों सें सम्बन्धित है। आनन्द एवं दु:ख यह भावनाएँ श्रृंगार, करुणा, हास्य, वीर इत्यादि रसों द्वारा ही मनुष्य व्यक्त करता है। प्राचिन साहित्य में नवों रसों को प्राधान्य दिया गया है। शारंगदेव द्वारा लिखीत संगीत रत्नाकर और भरत द्वारा नाट्यशास्त्र इस ग्रंथ के रसोंभाव समान ही है, तथापि नाट्यशास्त्र कालिन जाति गायन और संगीत रत्नाकार कालिन ग्राम ग्रामगायन आज लुप्त प्राय है। इसलिए राग एवं उनके रसों, इस विषय पर नयी विचारधारा का अवलंब करना आवश्य है। संगीतज्ञों में अनेक मत प्रवाह भी है। राग और रसों का सम्बंध कुछ भी नहीं, यह भी एक मत प्रवाह है, जो आज हमे दिखाई पडता है। राग एवं रसों कों सबंध परम्परागत है, ऐसा मानकर चलना यह भी एक मत प्रवाह है।

स्वतंत्र राग जो रसनिर्मिती को प्रेरक होता है, वह पथ मार्ग दर्शक रसानुरुप अभिव्यक्त होता है, किन्तु जोड रागों में रसनिर्मिती की बजाएँ रस भ्रामकता निर्माण होती है, यह सच भी जो अनदेखा नही किया जा सकता । गायक अथवा वादक अपने कला कौंशल्य से उस राग को भले ही न्याय दे रहा हो, किन्तु जोड राग

रसहानी को सहायक होता है, तथा रस भ्रामकता निर्माण करता है। हम अनेक जोड रागों से रसोंत्तपती की बजाए रसहानी की अनुभुती करते है।

भारतीय संगीत के दृष्टीसे आधारभुत, प्राचीन ग्रंथ पं. भरतमुनी द्वारा लिखीत नाटयशास्त्र ग्रंथ को ही प्रमाणीत माना जाता है। भरतकाल मे राग गायन का प्रचलन नही था, बल्की जातिगायन ही प्रचारित था। भरतद्वारा लिखीत नाटयशास्त्र ग्रंथ के २९ वे अध्याय में स्वर एवं रस इस संबंध मे विस्तृत विवेचन किया है। यह विवेचन जातिगायन के बारे मे है। इस अध्याय में जातीगायन में वर्णीत स्वरों एवं रसों का विशिष्ठ संबध दर्शाया गया है। रस का सारार्थ हम पाते है की, जातीगायन में जो स्वर महत्व पाता है उसी महत्वपूर्ण स्वर को जाती का रस समझा जाएँ। जैसे —

१. म तथा प स्वर श्रृंगार रस प्रधान एवं हास्य रस प्रधान है।
२. सा तथा रे स्वर वीर रस प्रधान एवं अदभुत रस प्रधान है।
३. ग तथा नि करुण रस प्रधान है।
४. ध यह स्वर भयानक रस प्रधान है।

शारंगदेव द्वारा लिखित संगीत रत्नाकर इस ग्रंथ मे राग एवं रस का विवेचन किया गया है। भरत द्वारा लिखित नाटयशास्त्र मे जातिगायन एवं शारंगदेव संगीत रत्नकार के स्वरों एवं रसों का विवेचन समसमान है। वह इसप्रकार है जो रागगायन के संबंध में पाते है।

१. राग मे लगनेवाला मुख्य स्वर का जो रस है , वही उस राग का रस माना जाये।
२. सा रे ग म प ध नि इन सात स्वरोंकों संगीत रत्नाकार में दिये गये रस एंव नाटयशास्त्र में दिये गये स्वर रसों को समान पाते है।

शारंगदेव ने प्रत्येक रागों को, रस पध्दती में निश्चित किया है। किंतू भरतमुनी नाटयशास्त्र कालीन जातीगायन तथा शारंगदेव कालीन संगीत रत्नाकर में उल्लेखित ग्रामराग गायन आज के आधुनिक काल में प्रचलीत नही है।

रागों के रसों को उदाहरण दाखल हम लेते है जो संगीत शास्त्रकार तथा संगीत विद्वानों द्वारा मान्य है।

१. राग पुर्व्या कल्याण:— पुर्व्याकल्याण इस राग में राग कल्याण एंवम मारवा इन रागों का मिश्रण है। मारवा राग की विशेषता रे कोमल शुद्ध गंधार तथा धैवत

इन स्वरों पर हैं। मारवा रागमें ध नि रे नि ध इन स्वरों में रिषभ का स्वर लगाव से गांभीर्य प्राप्त होता है एंवम करुण रसोंभाव दृष्टीगोचर होता है। और इस स्वर लगावसें मारवा की छटा तथा स्पष्टता दिखाई पडती है। जहॉ मारवा राग का स्वतंत्र प्रस्तुतीकरण होता है, वहॉ ध नि रे नि ध यह स्वर अपना प्राबल्य बनाये रखते है। एंवम मारवा का रसोंभाव दिलों दिमाग पर छाया रहता है। ध नि रे, ग , रे, नि ध इस स्वरों कों लेते समय गंधार और रिषभ पर विश्रांती लेकर फिर एक बार धैवत इस स्वर पर न्यास किया जाता है। जैसे म ध सां स्वर लगते है, गंभीर प्रकृती का संकेत मिलता है। ध नि, रे , ग म ध, म ग रे इन स्वरों कों लेकर तथा धैवत स्वर दिर्घ लेनेंपर, इस राग का सौंदर्य खुल जाता है। मारवा राग की रसोत्तोपत्ती से गायक एंवम श्रोता एक अलग अनुभुती में आसित होता है। जब ध नि रे ग म म ध म ग , रे नि ध इन स्वरों का चलन एंवम रिषभ स्वर पर न्यास होना, करुण रसोत्तोपत्ती की यह अनुभुती जैसै ही यमनकल्याण इस राग का पंचम लगाने का प्रयत्न करता है, उसी क्षण गायक/वादक की समाधी एंवम सुचीता भ्रमित होगी एवं इस पुर्वाकल्यान राग मे जैसै ही पंचमस्वर लगता है। तथा कल्यान यह राग श्रृंगार रस प्रधान माना जाता है। तात्पर्य रसोत्तोपत्ती भंग पायेगी, तथा कल्याण राग की रस हानि होना तय है। अर्थात जोड राग रसोत्तोपत्ती मे स्वतंत्र राग की रसोत्तोपत्ती को श्रेष्ठ पाया जाएगा।

२. राग बसंतबहार :— बसंत एवं बहार इस दो रागो का मिश्रन बसंतबहार राग है। इस राग में सा ग म ग रे सा, रें नि ध प, म ग, म रे ग, म ग रे सा, ग म ध रें सां, रें नि ध प, म ग , ग म ध, ग म ग,म रे सा , मग ,म ध रें सां यह स्वरपुष्प बसंत राग का भावार्थ स्पष्ट करता है। तथा बसंत राग में लगातार ध रें सां म ध रें सां, ध नि रे म ग, म ग रे सा , म ग म ग रे सा ,म ग म ध रें सां यह स्वर लगातार सुनना तथा बहार राग स्वर जैसे : सा म, म प ग ,म ग, नि ध नि सां, म नि ध नि सां यह स्वर गसंत राग हानी ही दर्शाता है।यह राग वैचित्र आर्केस्टा अर्थात पाश्चात्य संगीत स्वरों जैसा दिखाई देता है। जैसे किसीने मात्र गाया / बजाया हो। सा म , म प, ग म नि ध नि सां यह शुरवात हानेपर बसंत राग रें नि ध प , म ग म ग , रें नि ध प, बहार राग नि म प ग म नि ध नि सां यह स्वर वैचीत्रता रसोत्तोपत्ती भाव का भ्रमित हाना तस है।

३.राग भैरव बहार:— भैरव राग की विशेषता कोमल रिषभ एंव कोमल धैवत स्वर पर है। भैरव राग को शास्त्रकारद्वारा उल्लेखित करुण रस माना जाता है। इस राग का वैशिष्ठय रिषभ धैवत कोमल एंवम शुद्ध मध्यम इन स्वरोंपर है। आंदोलित रिषभ यह स्वर भैरव राग में अपना विशेष स्थान रखता है। जैसे ही रिषभ स्वर तथा कोमल धैवत ग म ध ध प, रे ग म ध प म प ग म रे सा इन स्वरोंपर गंभिरता और करुणता निर्माण होती है। जागो मोहन प्यारे जागो यह बंदिश सुनकर भक्ती एंवम करुण रस स्पष्ट होता हैं। जैसे ही चंचल प्रवृती का बहार राग कें स्वर समुह सा म, म प ग म नि ध नि लेते है, गंभीर प्रवृती का समाधीलिन भैरव कही खो सा जाता है। गायक/वादक द्वारा भैरवबहार राग का प्रस्तुतीकरण कहींपर या किसी क्षण भ्रमित तो करता ही होगा। स्वर वैचित्रता मात्र निर्माण होगी। भैरवबहार यह जोड राग तथा स्वतंत्र भैरव राग में रसानुभव की गंभीरता एंवम करुणता का अनुभव निश्चीत मात्र अलग होगा। भैरव राग जोडकर अनेक राग जैसे — नटभैरव, बसंतमुखारी, भैरवबहार शिवमतभैरव, आनंदभैरव इ. रसोभाव पर भी प्रश्न उपस्थित होना या परामर्श होना जरुरी है।

सारांश:

स्वतंत्र राग एंव जोड राग रस के संबध में नयी दृष्टीसे परामर्श होना चाहिये। इस रसोत्तोपती भाव के विषय में अनेक मतप्रवाह संगीत तज्ञों में है। तथा राग एवं रस का कुछ भी संबंध मात्र ही नही तथा स्वर रसोत्पादक ही नही, यह भी मतप्रवाह ध्यान देना चाहीये। राग का रसानूकुल परिणाम यह गायक / वादक के सामर्थ्य एवं कल्पना चातुर्य पर अवलंबित हैं, यह भी एक मतप्रवाह है जो को दुर्लक्षीत नही किया जा सकता। एक ही राग अनेक प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है। तथा राग गायन / वादन द्वारा रसोनिर्मिती की अनुभूति भी अलग अलग पायी जा सकती है। इस स्थिती में राग एवं रस का संबंध प्रश्नचिन्हित होता है। इस पर और भी विचार एवं संशोधन होना चाहिये। परंतू भारतीय संगीत परंपरा, प्राचीन मतों कों तथा रागों के रसों कों ही आधारभूत मानती है। तथापि इस विषय पर संशोधनात्मक निष्कर्ष निकालना आवश्यक है। मैफील में श्रोता पर होता परिणाम यह निष्कर्ष मानना चाहिए, या फिर इस संदर्भ में मौलिक संशोधन होना आवश्यक है। रागों कें गायन एवं वादन से रसोंनिर्मिती होती है, यह र्निविवादित सत्य है, मात्र वह स्वरों कें

सामर्थ्य से, या फिर कलाकारों कें बुद्धी सामर्थ्य से संभव हो पाता है, यह मुद्दा वादादीत है। अर्थात स्वतंत्र राग रस तथा जोड राग रस रसोत्तपत्ती का स्त्रोत माना जाये या नही, प्रश्न चिन्ह उपस्थित होना तय है।

सन्दर्भ ग्रन्थ – सूची

१. हिदुस्थानी संगीत पध्दती क्रमिक पुस्तक मालिका खंड:३४५६मूल ग्रंथकार: पं. विष्णुनारायण भातखंडे संपादक :लक्ष्मीनारायण गर्ग प्रकाशक– संकार्यालय,हाथरस, उ. प्र.

२. संगीत रत्नाकर मूल ग्रंथकार : पंडीत शारंग देव संपादक :सुभद्रा चौधरी

३. राग प्रवीण लेखक: पं. गणेश प्रसाद शर्मा प्रकाशक:– कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्टीब्युटर्स नई दिल्ली.